बिहार सरकार

पशु एवं मत्स्य संसाधन विभाग
बिहार, पटना

गो एवं भैंस पालन

पशु स्वास्थ्य एवं उत्पादन संस्थान, बिहार, पटना

भूमिका

प्राचीन काल से ही पशुपालन खासकर गो/भैंस पालन हमारे जीवन का एक अटूट हिस्सा रहा है। बिहार राज्य गाय की संख्या में भारत में पाँचवा तथा भैंस की संख्या में छठा स्थान रखता है (पशुगणना 2007 के अनुसार) तथा ग्रामीण क्षेत्रों में लगभग 80 प्रतिशत लोग गो/भैंस पालन से जुड़े है। फिर भी दूध उत्पादन में हमारा राज्य देश में नवें स्थान पर है तथा प्रति व्यक्ति दूध की उपलब्धता 184 ग्राम है, जो न्यूनतम मानदंड (300 ग्राम/व्यक्ति) से काफी कम हैं। मानक प्रबन्धन व्यवस्था की उचित जानकारी न होने के कारण पशुपालकों को इस व्यवसाय से अपेक्षित लाभ नहीं प्राप्त हो रहा है। उचित नस्ल का चुनाव, आहार प्रबन्धन, महत्वपूर्ण रोगों के विरूद्ध टीकाकरण की जानकारी, कृमिनाशक का ससमय प्रयोग एवं गर्भाधान संबंधी समस्या के उचित निदान से इस व्यवस्था से आर्थिक प्रगति हो सकती है। कई बार अज्ञानतावश पशुपालक अवैज्ञानिक तथा हानिकारक पद्धति अपनाते हैं जैसे दूध निकालने के लिए ऑक्सीटोसीन का प्रयोग करना जो पशु स्वास्थ्य खास कर प्रजनन पर बुरा प्रभाव तो डालता ही है, साथ–साथ मानव स्वास्थ्य को भी नुकसान पहुँचाता है।

बढ़ती बेरोजगारी, घटती कृषि योग्य भूमि तथा कृषि कार्यो पर समय–समय पर मौसम की प्रतिकूलता के दुष्प्रभाव के चलते एकमात्र पशुपालन ही समावेशित विकास को दिशा दे सकता है।

गाय की प्रमुख नस्लें

(A) देशी नस्लें

i. **साहीवाल**

प्राप्ति स्थान :– पंजाब, उत्तर प्रदेश, दिल्ली, राजस्थान एवं आंशिक रूप से बिहार में पायी जाती है।

शारीरिक लक्षण :– इसका सिर लम्बा एवं लम्बाई में मध्यम, सींग छोटे एवं मोटे, रंग लाल या हल्के लाल रंग, बैल सुस्त एवं गाय सीधी–साधी टाँगों वाली छोटे आकर के होते हैं।

औसतन प्रति व्यांत दूध उत्पादन की क्षमता 1134–3175 लीटर है।

साहीवाल

ii. **थारपारकर**

प्राप्ति स्थान :– यह नस्ल सिन्ध, कच्छ एवं माड़वाड़ आदि क्षेत्रों में पायी जाती है।

शारीरिक लक्षण :– इसका चेहरा लम्बा, सिर चौड़ा, सींग मध्यम, हम्प अच्छा होता है तथा पूँछ लम्बी होती है।

औसतन प्रति व्यांत दूध उत्पादन की क्षमता 680–2268 लीटर है।

थारपारकर

iii. **रेड सिन्धी**

प्राप्ति स्थान :– मुख्य रूप से सिन्ध प्रान्त में।

शारीरिक लक्षण :– शरीर मध्यम आकार का, रंग गहरा लाल या डार्क ब्राउन, कभी–कभी माथे पर सफेद धब्बे तथा गलकम्बल और पेट के नीचे भी सफेद धब्बे मिल सकतें है, मध्यम आकार के लटकते हुए कान एवं छोटे मजबूत सींग, लटकता हुआ गलकम्बल एवं विकसित शीथ।

औसतन प्रति व्यांत दूध उत्पादन की क्षमता 683–2268 लीटर है।

रेड सिन्धी

iv. **गिर**

प्राप्ति स्थान :– काठियावाड़ के गिर जंगलों में।

शारीरिक लक्षण :– शरीर बड़ा भारी भरकम, रंग लाल/लाल काले धब्बे/लाल सफेद धब्बों से युक्त, सिर लम्बा, कान लम्बे लटके हुए मुड़ी हुई पत्तियों के समान, पूछँ काली गुच्छेवाली जमीन तक लटकती हुई, हम्प बड़े आकार का, गलकम्बल हल्का पर शीथ बड़ा और लटका हुआ, सींग मुड़ा हुआ। औसतन प्रति व्यांत दूध उत्पादन की क्षमता 1225–2268 लीटर है।

गिर

v. **हरियाणा**

हरियाणा

प्राप्ति स्थान :– हरियाणा एवं दिल्ली राज्य के आस–पास में यह नस्ल पाया जाता है।

शारीरिक लक्षण :– इस नस्ल का आकार लम्बा, सकरा चेहरा, पोल के बीच उभार, त्वचा पतली एवं मुलायम, रंग सफेद एवं पूँछ लम्बी होती है। यह नस्ल कृषि एवं भारवाहक के लिए उपयुक्त है।

औसतन प्रति व्यांत दूध उत्पादन की क्षमता 635–1497 लीटर है।

vi. **शाहाबादी / गंगातीरी**

प्राप्ति स्थान :– बिहार के सारण जिले तथा उत्तर प्रदेश के बलिया में पायी जाती है।

शारीरिक लक्षण :– शरीर मध्यम आकार का, गहरे भूरे सफेद रंग का, सींग छोटे एवं मोटे तथा बड़ा हम्प। औसतन प्रतिदिन दूध उत्पादन 4.5 लीटर है।

vii. **बछौर**

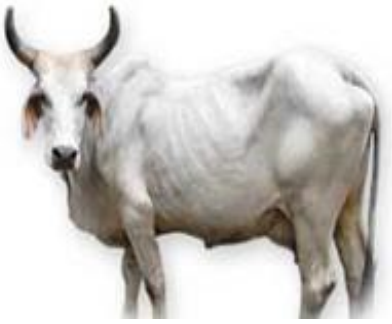

बछौर

प्राप्ति स्थान :– बिहार के सीतामढ़ी जिले में पायी जाती है।

शारीरिक लक्षण :– शरीर गठिला एवं पीठ सीधी, गर्दन छोटी, कंधा माँसल, ललाट चौड़ा, चिपटा एवं थोड़ा उत्तल, आँखें बड़ी एवं स्पष्ट, सींग मध्यम आकार के, कान मध्यम एवं नीचे की तरफ गिरे हुए, पूँछ छोटी एवं मोटी, रंग भूरा / भूरा सफेद होता हैं।

यह भारवाही किस्म की गो जाति है अर्थात् इसके बैल अच्छे होते हैं। दुग्ध उत्पादन के लिए यह जाति उपयुक्त नही है।

(B) <u>विदेशी नस्लें</u>

i. **होलस्टीन फ्रीजियन**

होलस्टीन फ्रीजियन

प्राप्ति स्थान :–यह नस्ल यूरोपियन देशों में नीदरलैंड में पायी जाती है।

शारीरिक लक्षण :– इसका रंग काला एवं सफेद, कान मध्यम आकार, सिर सीधा लम्बा एवं सँकरा होता है।

प्रति व्यांत दूध उत्पादन की क्षमता 6000 से 7000 लीटर है।

ii. **जर्सी**

प्राप्ति स्थान :– यह नस्ल इंगलैंड के पास जर्सी प्रान्त में पायी जाती है।

शारीरिक लक्षण :– सिर, कंधा एवं पीठ एक लाइन में होती है तथा रंग हल्का लाल या बादामी या भूरा होता है।

प्रति व्यांत दूध उत्पादन की क्षमता 4500 लीटर है।

जर्सी

भैंस की प्रमुख नस्लें

भारत देश में भैंस की निम्न नस्लें पायी जाती हैः–

i. **मुर्रा**

प्राप्ति स्थान :– यह नस्ल हरियाणा, दिल्ली, आंशिक रूप से उत्तर प्रदेश एवं बिहार इत्यादि राज्यों में पायी जाती है।

शारीरिक लक्षण :– इसका रंग काला, शरीर भारी, चमकदार, मुड़े हुए सींग, हल्की गर्दन व सिर पतला, चिकनी, मुलायम एवं चमकीली त्वचा, शरीर पर बाल कम तथा मादा पशुओं का शरीर आगे पतला और हल्का एवं पीछे का भारी तथा चौड़ा होता है।

औसतन प्रति व्यांत दूध उत्पादन की क्षमता 1360–2270 लीटर है।

मुर्रा

ii. **भदावरी**

प्राप्ति स्थान :– यह नस्ल उत्तर प्रदेश के आगरा, ग्वालियर तथा इटावा जिलों के आस–पास के क्षेत्रों में पायी जाती है।

शारीरिक लक्षण :– इसका रंग ताँबे जैसा, सफेद गुच्छेदार लम्बी पूँछ, सींग चपटे, मोटे पीछे की ओर मुड़कर ऊपर अंदर की ओर मुड़ा हुआ होता है।अयन छोटे, जिसपर शिराएँ उभरी होती है।

औसतन प्रति व्यांत दूध उत्पादन की क्षमता 1100–1300लीटर है।

भदावरी

iii. **जाफराबादी**

प्राप्ति स्थान :– यह नस्ल काठियाबाड़ तथा जाफराबाद के निकटवर्ती क्षेत्रों में पायी जाती है।

शारीरिक लक्षण :– गलकम्बल पूर्ण विकसित। इसका सिर और गर्दन भारी तथा ललाट उभरा हुआ होता है। सींग भारी एवं गर्दन की ओर मुड़े हुए होते है।

औसतन प्रति व्यांत दूध उत्पादन की क्षमता 1300–1400 लीटर है।

जाफराबादी

iv. **सूरती**

प्राप्ति स्थान :– मूल स्थान गुजरात, बड़ौदा का निकटवर्ती क्षेत्र नाडियाद, बसाड़ और खेड़ा।

शारीरिक लक्षण :– शरीर मध्यम आकार का, कद मंझोला, पेट आगे की ओर पतला तथा पीछे चौड़ा, सिर लम्बा, चौड़ा एवं सींगों के बीच गोलाकार, सींग प्रायः हंसिये के आकार के मध्यम लम्बाई के और चपटे, सफेद गुच्छेयुक्त लम्बी पूँछ, रंग काला अथवा भूरा, जबड़े व छाती पर

सफेद पट्टियाँ।
औसतन प्रति व्यांत दूध उत्पादन 1300–1400 लीटर तक।

सूरती

v. **नीली रावी**

प्राप्ति स्थान :– यह नस्ल पंजाब, उत्तर प्रदेश एवं आंशिक रूप से कुछ अन्य राज्यों में भी पायी जाती है।
शारीरिक लक्षण :– इसका रंग काला एवं कुछ भूरे रंग में पाये जाते है। माथे पर सफेद टीका। धंसा हुआ ललाट। चेहरा, थूथन और पैरों पर सफेद धारियाँ, लम्बी, पतली, गर्दन परन्तु गलकम्बल नहीं। सींग छोटे, मोटे और मुड़े हुए। मध्यम आकार के नुकीले कान। अयन पूर्ण विकसित एवं स्तन लम्बे।
औसतन प्रति व्यांत दूध उत्पादन की क्षमता 2000 लीटर है।

नीली रावी

vi. **मेहसाना**

प्राप्ति स्थान :– यह नस्ल गुजरात के मेहसाना जिला में पाया जाता है।
शारीरिक लक्षण :– इसका आकार मध्यम, काला रंग तथा सिर मुर्रा नस्ल के भैंस से मिलता जुलता है। गर्दन लम्बी, ललाट चौड़ा जिसके मध्य में थोड़ा गड्ढा, चेहरा लम्बा और सीधा, थूथन चौड़ी एवं नथुने खुले हुए, सींग दंतार की शक्ल के एवं मुर्रा भैंस की अपेक्षा कम मुड़े हुए। मध्यम आकार के नोंकदार कान एवं अंदर बाल उगे हुए।
औसतन प्रति व्यांत दूध उत्पादन की क्षमता 1800–2700 लीटर है।

मेहसाना

दुधारू पशु खरीदते समय ध्यान देने योग्य बातें

दुधारू पशुओं का मूल्यांकन उनके दुग्धोत्पादन क्षमता, प्रतिवर्ष बच्चा देने की सामर्थ्य तथा लम्बे, स्वस्थ्य एवं उपयोगी जीवन से किया जाता है। अच्छे दुधारू पशुओं का निम्नलिखित गुणों के आधार पर चुनाव किया जा सकता है–

1. शारीरिक संरचना –

- दुधारू पशु का शरीर तिकोना अर्थात् आगे से पतला तथा पीछे से चौड़ा होना चाहिए।
- नथुने खुले हुए जबड़ा मजबूत एवं पेशीवाला
- आँखे उभरी एवं चमकदार
- त्वचा पतली एवं चिकनी तथा पूँछ लम्बी
- कन्धा शरीर से भली–भाँति जुड़ा हुआ
- दुधारू गाय की जांघ पतली तथा चौरस एवं गर्दन पतली, लम्बी एवं सुस्पष्ट होनी चाहिए।
- अधिक चारा खा सके इसलिए पशु का पेट काफी विकसित होना चाहिए।

- अयन की बनावट समितीय (Symmetrical) उसकी त्वचा कोमल, लचीली एवं चमकदार, बालों से युक्त एवं पशु के शरीर से इसका जुड़ाव पीछे की ओर पिछले पैरों के काफी ऊपर तक होना चाहिए।
- थन के चारों बाट एक समान लंबे एवं मोटे, एक दूसरे से बराबर दूरी पर होने चाहिए।
- अयन में दूध की शिराएँ उभरी हुई, टेढ़ी–मेढ़ी तथा अच्छी तरह से विकसित दिखाई देना अच्छे पशु के लक्षण हैं।

2. **दुग्ध उत्पादन क्षमता :–** खरीदने से पूर्व स्वयं दो–तीन दिन तक दूह कर भली–भाँति परख लेना चाहिए। दुहते समय दूध की धार सीधे गिरना, दुहने के बाद थन सिकुड़ जाना चाहिए।

3. **वंशावली :–** यदि पशु की वंशावली के बारे में विस्तृत जानकारी मिल जाय तो उससे गाय की नस्ल एवं उसमें दुग्धोत्पादन क्षमता के बारे में सही जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

4. **आयु :–** सामान्यतः पशुओं की जनन क्षमता 10–12 साल की आयु के बाद सामाप्त हो जाती है। तीसरे–चौथे ब्याँत तक दुग्ध उत्पादन चरम सीमा पर रहता है, जो धीरे–धीरे घटता जाता है। अतः दुग्ध व्यवसाय के लिए दो–तीन दाँत वाले कम आयु के मवेशी अधिक लाभदायक होते है।

5. **स्वास्थ्य :–** पशु का स्वास्थ्य अच्छा होना चाहिए। पशु के स्वास्थ्य के बारे में इधर–उधर से जानकारी भी अवश्य हासिल करनी चाहिए। टीकाकरण एवं अब तक हुई बीमारियों के बारे में सही जानकारी होने से उसके उत्तम स्वास्थ्य पर भरोसा किया जा सकता है।

6. **जनन क्षमता :–** आदर्श दुधारू गाय वही होती है, जो प्रतिवर्ष एक बच्चा देती है। पशु खरीदते समय प्रजनन इतिहास अच्छी तरह जान लेना चाहिए। यदि उसमें किसी प्राकर की कमी हो तो उसे नहीं खरीदना चाहिए, क्योंकि ये कमियां कई बार बीमारी के कारण तथा कई बार वंशानुगत भी होते है। इसके चलते भविष्य में समय से पाल न खाने, गर्भपात होने, स्वस्थ बच्चा नहीं जनने, प्रसव में कठिनाई होने इत्यादि कई प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ सकता है।

गाय एवं भैंस की आवास व्यवस्था

भारतीय परिवेश में पशुपालन का कार्य उन 80 प्रतिशत परिवारों के हाथ में है, जो गाँवों में निवास करते हैं तथा मुख्यतः कृषि एवं कृषि आधारित व्यवसायों से जुड़े हैं। दूध उत्पादन से संबंधित व्यवसाय भी उन्हीं में से एक है। डेयरी पशुओं के बेहतर प्रबंधन में आवास की व्यवस्था का एक महत्वपूर्ण स्थान है। पशु का आवास जितना अधिक स्वच्छ व आरामदायक होगा, पशु का स्वास्थ्य उतना ही उत्तम रहेगा तथा वह अपनी क्षमता के अनुसार अधिक से अधिक दूध उत्पादन करने में सक्षम होगा। साथ ही प्रतिकूल परिस्थितियों (सर्दी, गर्मी, वर्षा एवं लू इत्यादि) से बचाव के लिए भी समुचित आवास प्रबंधन आवश्यक है।

आदर्श गोशाला बनाते समय निम्न बातों को ध्यान में रखना चाहिएः–

1. पशु आवास पानी वाले स्थानों से दूर ऊँचे, सूखे साफ–सुथरे एवं स्वच्छ वातावरण में होना चाहिए तथा आवास वाले स्थान की मिट्टी बलुआही होनी चाहिए।
2. पशु आवास हवादार तथा दिन भर सूर्य की रौशनी से परिपूर्ण होना चाहिए अर्थात धूप कम से कम तीन तरफ से लगनी चाहिए।
3. पशु आवास पशुपालक के निवास स्थान के समीप होना चाहिए, साथ ही बाजार से जुड़नेवाले मुख्य मार्ग के समीप होना चाहिए।
4. पशु गृह का घेरा इतना बड़ा होना चाहिए कि पशु आसानी से शरीर घुमा सके तथा बैठ सके तथा नस्लवार दैनिक आवश्यकता के अनुसार सामान्य व्यवहार दर्शाने की सुविधा हो। साथ ही दरवाजे एवं नाद इस प्रकार बने हो कि चारा दाना आसानी से खिलाया जा सके।
5. पशु के बैठने एवं विश्राम का स्थान साफ, सूखा एवं फिसलन रहित होना चहिए।
6. पशु आवास पर बिजली एवं पानी की समुचित व्यवस्था होना आवश्यक है।
7. विभिन्न श्रेणी के पशु जैसे बछड़ों, गाभिन पशु, बीमार पशु इत्यादि को रखने के लिए अलग–अलग बाड़ा होना चाहिए।
8. चारा काटने तथा चारा–दाना रखने के लिए अलग भंडार गृह होना चहिए।
9. गोशाला के चारों ओर छायादार वृक्ष होने चाहिए।
10. पशुओं के कार्य के लिए सस्ते श्रमिक की उपलब्धता भी उस स्थान पर होनी चाहिए क्योंकि बिना श्रमिक के बड़े पैमाने पर डेयरी कार्य चलाना उत्यन्त कठिन है। इसके अलावा डेयरी उत्पादों जैसे दूध, पनीर, खोया इत्यादि के विपणन की सुविधा भी पास में होनी चाहिए।
11. पशु आवास बनाने में सबसे महत्वपूर्ण बात है कि पशु गृह उपलब्ध स्थानीय वस्तुओं से निर्मित की जाए, ताकि वह सस्ता बन सके।

पशु आवास की बनावट

i. गोशाला की लम्बाई पूर्व से पश्चिम दिशा में होनी चाहिए, ताकि सूर्य की रोशनी खिड़कियों तथा दरवाजों से आवास में प्रवेश कर सके तथा पेशाब की नाली पर दिनभर धूप लग पाए।

ii. गोशाला में प्रति गाय 40 वर्गफीट एवं प्रति भैंस 45 वर्गफीट स्थान रखना चाहिए।

iii. पाँच गायों के लिए लगभग 40 फीट लम्बी एवं पाँच भैंस के लिए 45 फीट लम्बी तथा दोनो स्थिति में चौड़ाई 10 फीट होनी चाहिए। गोशाला को सामान्यतः तीन भागों में बाँटें :–

गाय के लिये स्थान	20 X 10 फीट
भैंस के लिये स्थान	22 X 10 फीट

बाछा–बाछी, पाड़ा–पाड़ी	10 X 10 फीट
दाना–चारा तथा आवश्यक सामान रखने हेतु भंडार घर के लिये	10 X 10 फीट

iv. पशु आवास की छत छप्पर, खपरैल, नालीदार चादरों की बनाई जाती है। छप्पर स्थानीय उपलब्ध सामानों से निर्मित की जानी चाहिए। यह सस्ती होती हैं साथ ही आरामदायक होती है।

v. दीवार चिकनी एवं प्लास्टर युक्त बनानी चाहिए ताकि सफाई करने में आसानी हो।

vi. फर्श समतल होना चाहिए परन्तु चिकना नहीं होना चहिए तथा जलरोधी होना चाहिए। पशुओं के खड़े होने का फर्श का स्थान सीमेंट कंक्रीट एवं ईट के खरंजे का बना सकते है।

vii. गोशला में प्रति वयस्क पशु (गाय एवं भैंस) चारा का नाद के लिए 65 से0 मी0 से 85 से0 मी0 स्थान उपलब्ध कराना चाहिए। खाने के नाद की गहराई 35 से 40 से0 मी0 तथा चौड़ाई 50 से 60 से0 मी0 होनी चाहिए। पशु के खड़े होने की तरफ नाद की ऊँचाई 65–75 से0 मी0 होनी चाहिए ।

गाय/भैंस का आहार

गाय/भैंस एक जुगाली करने वाला पशु है। अतः इनके आहार का मुख्य अवयव सूखा चारा, हरा चारा एवं दाना मिश्रण होता है। व्यवसाय एवं स्वास्थ्य की दृष्टि से गाय/भैंस को संतुलित आहार देना चाहिए। वैसा आहार, जिसमें पशु की सभी आवश्यकताओं की पूर्ति एवं उसे स्वस्थ रखने के लिए सभी आवश्यक पोषक तत्व (प्रोटीन, कार्बोहाईड्रेट, वसा, खनिज लवण तथा विटामिन) सही अनुपात एवं उचित मात्रा में उपलब्ध हो, संतुलित आहार कहते हैं।

सूखा चारा के रूप में पुआल, गेहूँ. अरहर, चना, मटर इत्यादि का भूसा मुख्य रूप से दिया जाता है। पुआल की अपेक्षा भूसा को पशु अधिक चाव से खाते है।

गाय/भैंस के चारे में हरे चारे का विशेष महत्व है क्योंकि यह स्वादिष्ट होने के साथ–साथ पौष्टिक भी होता है तथा दूध उत्पादन में भी वृद्धि करता है। भैंस के आहार में चराई का विशेष महत्व है। कभी–कभी भैंस चर कर भी हरी घास से पेट भर लेती है। हरे चारे के रूप में रबी मौसम में बरसीम, लूसर्न, जई तथा खरीफ में मक्का, ज्वार, एम0पी0चेरी, लोबिया इत्यादि का उपयोग हमारे पशुपालक मुख्य रूप में करते है।

सूखे व हरे चारे के अतिरिक्त आहार को संतुलित बनाने के लिए दाना मिश्रण की खास भूमिका है। यह प्रायः मकई, जौ, गेहूँ, चोकर खुद्दी, खल्ली, खनिज लवण नमक इत्यादि को मिलाकर बनाया जाता है।

गाय/भैंस के आहार संबंधी महत्वपूर्ण बातेंः–

1. आहार देते समय पशु के पसंद का ख्याल रखें। दिया जानेवाला चारा संतुलित हो परन्तु गाय चाव से नहीं खा रही हो तो उसमें गुड़, नमक, खल्ली इत्यादि मिला दें।
2. वैसा आहार देना चाहिए, जो संतुलित हो साथ ही जिसे खाने से पशु को संतोष हो।
3. आहार में अचानक बदलाव न लाऐं। नया आहार देते समय शुरू में उसे पुराने आहार के साथ थोड़ा–थोड़ा मिलाकर दें ताकि पशु को धीरे–धीरे नये आहार की आदत पड़ जाये।
4. सड़ा–गला आहर कभी न दे क्योंकि सड़ी–गली चीजों में एक प्रकार का फफूंद लग जाता है।
5. सूखा/हरा चारा को कुट्टी काटकर खिलाऐं। इसी प्रकार दाना का दर्रा बना कर दें ताकि चारा, दाना पचने में आसानी हो।
6. उपलब्धता के आधार पर आहार का चुनाव करें ताकि वह सस्ता हो सके।

7. पशु को खिलाने से 2–3 घंटा पहले आहार को पानी में फुला लें।
8. प्रसव के एक महीना बाद तक दाना पका कर दें।

आहार की मात्राः–

अच्छे व संतुलित आहार में तीन चौथाई मात्रा सूखा तथा हरा चारा एवं एक चौथाई भाग दाना मिश्रण मिलाते है। यदि उन्नत किस्म का हरा चारा जैसे बरसीम, लूसर्न उपलब्ध हो तो दाना मिश्रण देने की आवश्यकता नहीं पड़ती है। परन्तु 9 लीटर से अधिक दूध देने वाली गाय के लिए प्रति तीन किलो दूध पर एक किलो दाना तथा भैंस में ढ़ाई किलो दूध पर एक किलो दाना मिश्रण देना चाहिए।

गर्भवती गाय/भैंस को गर्भावस्था के अंतिम दो महीने में लगभग 1.5 किलो दाना अतिरिक्त आहार के रूप में देना चाहिए।

दूध देनेवाले पशु में प्रतिदिन आहार की मात्राः–

1. सूखा पुआल या भूसा :– 5 किलो
2. साधारण घास :– 25 किलो
3. दाना मिश्रण :– 3 किलो

बिसुखने पर प्रतिदिन आहार की मात्राः–

1. सूखा भूसा या पुआल :– 6 किलो
2. साधारण घास :– 15 किलो
3. दाना मिश्रण :– 1 किलो

बच्चा देने के दो माह पहले दाना मिश्रण 500–700 ग्राम बढ़ा दें।

हरी घास नहीं मिलने की स्थिति में दुधारू को 4 किलो एवं बिसुखने पर 2 किलो दाना मिश्रण के साथ इच्छानुसार पुआल देना चाहिए।

चरने की सुविधा रहने पर भैंस लगभग एक तिहाई हरे चारे की मात्रा दिन भर में चर लेती है।

दाना मिश्रण के रूप में निम्न फार्मूला पर आधारित आहार दें:–

फार्मूला–1

1	चोकर	50 भाग
2	चना का दर्रा	17 भाग
3	सरसों/तीसी की खल्ली	30 भाग
4	खनिज मिश्रण	2 भाग
5	नमक	01 भाग
	कुलः–	**100 भाग**

फार्मूला–2

1	चोकर	22 भाग
2	चना की चुन्नी	40 भाग
3	तीसी की खल्ली	35 भाग
4	खनिज मिश्रण	02 भाग
5	नमक	01 भाग
	कुलः–	**100 भाग**

फार्मूला–3

1	जौ	25 भाग
2	गेहूँ का चोकर	17 भाग
3	चावल का चोकर	10 भाग

फार्मूला–4

1	मक्का का दर्रा	20 भाग
2	जौ	20 भाग
3	गेहूँ का चोकर	17 भाग

4	मक्का का दर्रा	20 भाग
5	सरसों की खल्ली	25 भाग
6	खनिज मिश्रण	02 भाग
7	नमक	01 भाग
	कुलः–	**100 भाग**

4	सरसों की खल्ली	10 भाग
5	मूँगफली की खल्ली	30 भाग
6	खनिज मिश्रण	02 भाग
7	नमक	01 भाग
	कुलः–	**100 भाग**

नवजात बाछा/बाछी एवं पाड़ा/पाड़ी का आहारः–

1. जन्म लेने के तुरंत बाद से 3–4 दिन तक नवजात को खीस देना चाहिए।
2. एक माह की उम्र तक नवजात को शरीर के वनज का दसवाँ भाग दूध देना चाहिए।
3. एक माह के उपरान्त बाछा/बाछी एवं पाड़ा/पाड़ी कोमल घास चबाने योग्य हो जाते हैं। इस समय उसे दूध के साथ अच्छी किस्म का भूसा थोड़ी मात्रा में देना चाहिए तथा दूध की जगह मखनिया दूध, मिल्क रिप्लेसर देना चाहिए।
4. छः माह से ऊपर के बच्चे को हरी घास के साथ सूखा चारा तथा उम्र के अनुसार दाना भी देना चाहिए। इस समय दिए जानेवाले दाने को काफ स्टार्टर कहते है।

क्रमांक	विवरण	मात्रा
1	मकई का दर्रा	12 किलो
2	चना का दर्रा	23 किलो
3	ज्वार का दर्रा	10 किलो
4	चोकर	10 किलो
5	नारियल की खल्ली	23 किलो
6	अलसी की खल्ली	20 किलो
7	खनिज मिश्रण	01 किलो
8	नमक	01 किलो
	कुलः–	**100 किलो**

क्रमांक	विवरण	मात्रा
1	मकई का दर्रा	50 किलो
2	मूँगफली की खल्ली	30 किलो
3	चोकर	07 किलो
4	सूखा मछली पाउडर	10 किलो
5	खनिज मिश्रण	02 किलो
6	नमक	01 किलो
	कुलः–	**100 किलो**

5. तीन माह से ऊपर के बच्चे का आहार में वयस्क का दाना मिश्रण डेढ़ किलो से शुरू कर धीरे–धीरे बढ़ाना चाहिए तथा अधिक से अधिक 2.5 किलो दें। हरा चारा 10–20 किलो दें।
6. चारा–दाना की तरह स्वच्छ पानी बच्चे को उपलब्ध कराना चाहिए। 500 किलो के पशु को औसतन 50 लीटर पानी की आवश्यकता होती है। गर्मी के मौसम में पानी की आवश्यकता बढ़ जाती है।

गाय/भैंस का प्रजनन

- सामान्य स्थिति में एक देशी गाय लगभग दो वर्षों, देशी भैंस लगभग तीन वर्षों तथा संकर गाय 15–18 माह में प्रजनन योग्य हो जाती है।
- प्रथम बार गर्मी प्रदर्शित करने वाली गाय/भैंसों में 1–2 गर्मी छोड़कर गर्भित कराना चाहिए।
- हमारे देश में भैंस का गर्भधारन मौसमी होता है अर्थात् इन्हें अधिकांशतः बरसात के मौसम में गर्भित कराना ज्यादा उचित होता है।
- साधारणतः गाय/भैंस हर 21वें (19–23) दिन गर्मी में आती हैं।
- गाय/भैंस को गर्भित कराने का उपयुक्त समय गर्मी (मद) की मध्य अवस्था से लकर गर्मी के देर की अवस्था (12–18 घंटे) होती है। अर्थात् यदि गाय/भैंस शाम में गर्म होती है तो सुबह में गर्भित कराना चाहिए और यदि सुबह गर्म हो तो शाम में गर्भित कराना चाहिए।
- गाय/भैंस को कृत्रिम गर्भाधान विधि से कराना अधिक लाभकारी होता है। कृत्रिम गर्भाधान कराने के समय पशुपालक को निम्न बातों पर ध्यान देना चाहिए –
  - गर्भाधान प्रशिक्षित व्यक्ति के द्वारा कराना चाहिए।
  - तकनीशियन को हीमकृत वीर्य को सही तरीके से तरल नेत्रजन में सुरक्षित ढ़ंग से रखना चाहिए।
  - गर्भाधान करते समय तकनीशियन को पूरे हाथ का दास्ताना का इस्तेमाल करना चाहिए तथा हाथों को किसी एन्टीसेप्टीक से अच्छी तरह से धो लेना चाहिए।
  - हीमकृत वीर्य को इस्तेमाल करने से पूर्व अच्छी तरह से उसका द्रवीकरण कर लेना चाहिए।
- प्राकृतिक रूप से गर्भाधान कराने की स्थिति में अच्छे नस्ल एवं स्वस्थ सॉढ़/भैंसा का चुनाव करना चाहिए।
- एक बछड़ा से दूसरे बछड़ा के जन्म के बीच 12–13 महीने का अंतराल उत्तम होता हैं। साधारणतः बच्चा देने के लगभग तीन माह बाद गर्भाधान कराना उचित होता है।
- गर्म गाय/भैंस को पानी से नहलाने के उपरान्त गर्भित कराया जाए तथा गर्भित कराने के उपरान्त पुनः नहला दिया जाय तो अच्छे परिणाम प्राप्त होते है।
- पशु समय से गर्म तथा गर्भित हो इसके लिए आवश्यक है उसे पौष्टिक संतुलित आहार देना तथा इसमें खनिज मिश्रण एवं नमक का विशेष महत्व है। अतः पशु को आहार में प्रतिदिन लगभग 30–50 ग्राम खनिज मिश्रण तथा लगभग 20–30 ग्राम नमक देना चाहिए। साथ ही समय–सामय पर पशु चिकित्सक की सलाह से कृमिनाशक दवा का प्रयोग करना चाहिए।
- गाय में गर्भावस्था लगभग 280(274–291)दिन तथा भैंस में लगभग 310(310–320) दिन का होता है।

गाय/भैंस में गर्मी के लक्षणः–

1. जुगाली करना एवं चारा खाना छोड़ देना तथा बेचैन होकर घूमना।
2. दुग्ध उत्पादन घट जाना।

3. घूमते समय पूँछ उठाए रखना तथा जल्दी–जल्दी मूत्र त्याग करना।
4. पशु के जननांग से स्वच्छ पानी की तरह श्लेष्मिक द्रव्य निकलता है।
5. बार–बार रंभाना/बोलना।

बछड़े/बछड़ियों की देखभाल एवं प्रबंधन

दुग्ध व्यवसाय की सफलता उसके नवजात बछड़े/बछड़ियों के स्वस्थ्य एवं समुचित प्रबंधन पर निर्भर करता है क्योंकि ये बछड़े हीं कल के पशु समूह होते हैं। प्रायः देखा जाता है कि उचित प्रबंधन के अभाव में बछड़े/बछड़ियों की मृत्यु अधिकांशतः 0–15 दिन में हो जाती है, जिससे पशुपालक को काफी क्षति उठानी पड़ती है। बच्चों में मृत्यु का मुख्य कारण है पालन–पोषण में पशुपालक स्तर से लापरवाही बरतना। अतः गाय/भैंस के बच्चों के उचित प्रबंधन हेतु अनेक वैज्ञानिक पद्धतियाँ विकसित की गई हैं, जिसे अपनाकर एक स्वस्थ एवं अधिक उत्पादन क्षमता वाला पशु तैयार किया जा सकता है।

1. **गर्भावस्था के दौरान प्रबंधन :–** स्वस्थ बछड़ा प्राप्त करने के लिए गाय/भैंस का उचित पोषण प्रबंधन गर्भावस्था के समय से ही करना चाहिए। गर्भावस्था के अंतिम 3–5 माह में ही बच्चे का सर्वाधिक विकास होता है। अतः इस दौरान गाय/भैंस के पोषण का विशेष ध्यान रखना चाहिए। मादा को स्वतंत्र रूप से चरने के लिए छोड़ना चाहिए। चारागाह की उपलब्धता के अभाव में उसे निर्वाह राशन के अतिरक्त 2–3 कि0 ग्रा0 दाना मिश्रण प्रतिदिन देना चाहिए। इसके अतिरिक्त ब्याने के दो माह पूर्व दूध दुहना बंद कर देना चाहिए। गर्भधारण कराने से पूर्व तथा गर्भावस्था के अंतिम चरण में पशु को कृमिनाशक औषधि का सेवन कराने से पशु एवं बच्चे का स्वास्थ्य उत्तम रहता है।

2. **जन्म के बाद नवजात बछड़े की देखभाल :–**

i. गाय/भैंस के ब्याने के तुरंत बाद बच्चे के नाक एवं मुँह से श्लेष्मा व झिल्ली को साफ कर देना चाहिए ताकि उसे साँस लेने में दिक्कत न हो। इसके अलावे माँ को उसे चाटने देना चाहिए, जिससे बच्चे का रक्त संचार सुचारू रूप से हो सके। कभी–कभी मॉ बच्चे को चाट कर साफ नहीं करती है तो उसे साफ–सुथरें व मुलायम कपड़े से पोछ कर साफ कर देना चाहिए। यदि बच्चे को साँस लेने में कठिनाई हो रही हो तो उसके मुँह में हवा डालकर कृत्रिम श्वसन की व्यवस्था करनी चाहिए।

ii. बछड़े के नाभि को किसी नये ब्लेड अथवा विसंक्रमित कैंची के द्वारा शरीर से 1 इंच की दूरी पर काट कर गाँठ बाँध देना चाहिए, तथा उसपर टिंचर आयोडिन या बोरिक एसिड अथवा अन्य कोई एण्टीबायोटिक लगा देना चाहिए।

iii. बच्चे का वजन ले लेना चाहिए।

iv. बाड़े में साफ, मुलायम व सूखा बिछावन की व्यवस्था होनी चाहिए।

v. जन्म के बाद यथाशीघ्र बच्चे को माँ का पहला गाढ़ा दूध अर्थात खीस पिलाना चाहिए।

vi. कभी–कभी मादा की मृत्यु अथवा अचानक बीमार होने की स्थिति में खीस उपलब्ध न हो तो किसी और पशु के खीस का प्रयोग किया जा सकता है अथवा कृत्रिम रूप से खीस निम्न अवयवों को मिलाकर बना सकते है :–

उबाल कर ठंढा किया पानी	**:– 300 मि0 ली0**
अंडा	**:– 1 पीस**
साधारण दूध	**:– 600 मि0 ली0**
अंडी का तेल	**:– आधा चम्मच**
विटामिन ए (10,000 यूनिट)	**:– 80 ग्राम**
एन्टीबायोटिक (टेट्रासाईक्लिन)	**:– 80 मि0 ग्रा0**

vii. कभी–कभी पशुपालक बच्चे को माँ से अलग रख कर पालने की पद्धति अपनाना चाहते हैं। ऐसी स्थिति में शुरू से ही बच्चे को बर्तन में दूध पीना सिखाना चाहिए तथा जन्म से ही माँ से अलग कर देना चाहिए। इस व्यवस्था में सफाई का अत्यधिक ध्यान रखने की आवश्यकता है।

viii. एक माह की उम्र तक नियमित अंतराल पर बच्चे को उसके शरीर भार का दसवाँ भाग दूध पिलाना चाहिए।

ix. बछड़ों/बछड़ियों को सींग रहित करने के लिए जन्म के कुछ दिन बाद उनके सींगों की जड़ को दवा अथवा शल्य क्रिया द्वारा नष्ट कर दिया जाता है। यह कार्य गाय के बच्चे की 10–15 दिन की आयु में अवश्य करा लेना चाहिए क्योंकि तब तक सींग की जड़ कपाल की हड्डी से अलग होती है। अतः इन्हें आसानी से निकाला जा सकता है। आयु अधिक होने पर उन्हें सींग रहित करना काफी तकलीफदेह होता है।

x. नर बछड़ों को जनन क्रिया से रहित करने के लिए 8–10 सप्ताह की उम्र में उनका बधियाकरन करा देना चाहिए।

xi. **टीकाकरण :–** विभिन्न जीवाणुजनित एवं विषाणुजनित रोगों से बचाव हेतु बच्चों में पशुचिकित्सक की सलाह पर टीकाकरण कराना चाहिए।

xii. **अंतः परजीवी** से बचाव हेतु हर तीन माह में एक बार पशु चिकित्सक की सलाह से दवा देनी चाहिए तथा बाह्य परजीवी से बचाव हेतु बाड़े की सफाई पर विशेष ध्यान देना चाहिए एवं पशु चिकित्सक के सलाह के अनुसार उपचार करना चाहिए।

गो/भैंस के प्रमुख रोग एवं निदान

भारत एक कृषि प्रधान देश है जिसमें पशुपालन का योगदान महत्वपूर्ण है। गरीब एवं भूमिहीन किसानों की जीविका का मुख्य साधन पशुपालन है। अतः पशुओं का स्वस्थ रहना आवश्यक है। परन्तु उचित देख–रेख, पालन–पोषण के अभाव में एवं अन्य कई कारणों से पशुओं में कई प्रकार की बीमारियाँ उत्पन्न होती है तथा पशुपालकों को आर्थिक क्षति उठानी पड़ती है। अतः इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए पशुपालकों को गाय एवं भैंस में होने वाली विभिन्न महत्वपूर्ण रोगों के बारे में आवश्यक जानकारी होनी चाहिए।

स्वस्थ एवं अस्वस्थ पशु के लक्षण

क्रम सं0	अवस्थाएँ	स्वस्थ पशु	अस्वस्थ पशु
1.	खाना में रूचि	सामान्य	आंशिक कम
2.	तापक्रम	101–102 डिग्री फारेनहाईट	असामान्य
3.	पानी पीने की क्षमता	सामान्य	साधारणतः कम
4.	दुग्ध उत्पादन क्षमता	सामान्य	कम
5.	पागुर	सामान्य	कम
6.	शरीर की स्थिति	सामान्य	ज्यादातर कमजोर एवं सुस्त
7.	देखने में	चंचल	सुस्त

8.	चाल	सामान्य या आसानी से चलना	धीरे–धीरे या दिक्कत से चलना
9.	सिर	सीधा एवं उठाये हुए	झुका हुआ/नीचे की तरफ
10.	आँख	चमक	चमक में कमी
11.	कान	खड़ा एवं तुरन्त–तुरन्त घुमाना	झुका एवं देर से घुमाना
12.	मुँह	भींगा एवं गंधरहित	सूखा एवं लार गिरना, साथ ही खराब गंध
13.	नाक	कोई स्त्राव नहीं	कुछ स्त्राव आ सकता है
14.	थूथन	नमी	सूखा
15.	चमड़ी/बाल	चिकना एवं चमक	रूखड़ा एव चमक में कमी
16.	गोबर	अर्द्धठोस	सूखा या ढ़ीला
17.	पेशाब	थोड़ा पीला	गहरा पीला, कॉफी रंग या गुलाबी रंग
18.	पूँछ का हिलाना	तुरन्त–तुरन्त घुमाना	देरी से घुमाना
19.	श्वसन या साँस	12 से 16 प्रति मिनट	ज्यादा/साँस लेने में दिक्कत
20.	नाड़ी दर	40 से 60 प्रति मिनट	साधारणतः ज्यादा
21.	रूमेन की गति	5 मिनट में 3 बार	असामान्य

गलघोंटू (एच0 एस0)

यह जीवाणु जनित तथा घातक संक्रामक रोग है जो अधिकतर वर्षा काल में होती है।

लक्षण :– इसमें पशुओं को तेज बुखार, गर्दन एवं मुँह पर सूजन हो जाती है। मुँह से लार और नाक से गाढ़ा स्राव निकलता है। यह रोग भैंसों में अधिक होती है और कभी–कभी 80 से 90 प्रतिशत रोग ग्रस्त पशु मौत के घाट उतर जाते है। जीभ और गले की सूजन बढ़ जाने पर साँस लेने में कठिनाई होती है और पशु जीभ निकालकर साँस लेने लगता है और घर्र–धर्र की आवाज करने लगता है। लक्षण प्रकट होते ही तुरन्त पशु चिकित्सक से सम्पर्क करना चाहिये। रोगी पशु को स्वच्छ एवं खुली हवा में रखना चाहिये।

बचावः– टीकारण करवाना उचित है। मानसून शुरू होने से पहले अपने पशुओं को टीकाकरण करवा लेना चाहिये। बीमार पशु को अलग रखना चाहिए तथा मृत पशु के शव, गोबर, मूत्र, रक्त एवं बिछावन को जमीन में गहरा दबाकर चूना डाल देना चाहिए।

लंगड़ा बुखार/जहरवात/ब्लैक क्वार्टर (बी0 क्यू0)

यह रोग भी जीवाणु जनित है जो प्रायः वर्षाकाल के समय अधिक देखा गया है। पशुओं में ज्यादातर जवान पशुओं (दस माह से दो वर्ष) को अधिक प्रभावित करता है।

लक्षण :– तेज बुखार, जांघों के ऊपर, कंधों या गर्दन पर दर्द एवं सूजन होती है। पशु लंगड़ा कर चलता है। बाद में चलने फिरने में असमर्थ हो जाता है। सूजन के भाग को छूने और दबाने पर चड़चड़ाहट की आवाज आती है। कभी–कभी सूजन सड़े घाव में बदल जाता है। अगर शरीर का तापमान गिरने लगे तो पशु की मृत्यु की संभावना अधिक हो जाती है। लक्षण प्रकट होने पर तुरंत पशु चिकित्सक से सम्पर्क करना चहिये।

बचाव– उचित समय पर पशुचिकित्सक की देख–रेख में टीकाकरण करवाना चाहिये।

गिल्टी रोग/तड़का/एन्थ्रेक्स

एन्थ्रेक्स एक प्रकार की जीवाणुजनित पशुजन्य बीमारी है।

लक्षण – कभी–कभी संक्रमित जानवर की मृत्यु बीमारी के 24 घंटे के भीतर बिना किसी लक्षण के हो जाती है। मृत्यु के पश्चात् मुँह, नाक, मल द्वार से रक्त स्त्राव होता है।सामान्यतः पशुओं में तीव्र ज्वर(106–108^{0}F), भूख न लगना, श्लेष्मिक झिल्ली में लालिमा, तीव्र श्वॉस तथा हृदय गति, शरीर मे जगह–जगह सूजन आदि मुख्य लक्षण है।

बचाव– स्वस्थ पशुओं को साल में एक बार एन्थ्रेक्स का टीका अवश्य लगवाना चाहिए। सामान्य परिस्थितियों में शव परीक्षण वर्जित है। किसी भी हालत में पशु की खाल नहीं उतारनी चाहिए और न ही शव परीक्षण हेतु लाश को खोलना चाहिए। लाश को जलाने की विधि, भूमि में गाड़ने की अपेक्षा अत्यधिक उचित है।

खुरपका या मुँहपका (एफ0एम0डी0) रोग

इस बीमारी में पशु के मुँह, खुर, अयन, थन पर छाले पड़ जाते हैं । इस बीमारी के कारण गाय/भैंस में दूध उत्पादन एवं बैलों के काम करने की शक्ति में कमी हो जाती है। यह रोग रोगी पशु के सम्पर्क में आने से या छूत लगे पानी, घास,–भूसा आदि द्वारा फैलता है । रोगी पशु की देख–भाल करने वाले व्यक्ति भी अपने जूतों, कपड़ों और हाथों द्वारा रोग फैला सकते हैं ।

लक्षणः– इस रोग में शुरू में बुखार(107–108^{0}F) होता है। पशु जुगाली करना बन्द कर देता है । बाद में लार का टपकना, चपचप आवाज आना जीभ, मसूड़ों पर पानी वाले फफोले बनना, खाने में परेशानी, खुर का उतर जाना, शरीर में दुर्बलता, थनों पर फफोले, दूध में कमी, हाँफने के लक्षण मिलते हैं ।

इलाजः– तुरंत अपने पशु चिकित्सक से सम्पर्क करें ।
जीभ पर छालों को पोटाश 1 ग्राम 3 लीटर पानी मे या फिटकिरी 5 ग्राम 1 लीटर पानी में घोल बनाकर दिन में 3–4 बार धोना चाहिये तथा 2–3 बार बोरो ग्लिसरीन का लेप लगाना चाहिए। खुरों को फिनाइल 40 ml, 1 लीटर पानी में घोलकर धोना चाहिये । कीटाणुनाशक मलहम का प्रयोग करना चाहिए।

बचाव :– इस रोग से बचाव हेतु टीकाकरण (पहला टीका 3 माह की उम्र में, बूस्टर 9 माह की उम्र में तत्पश्चात् वर्ष में दो बार) करना चाहिए।

- स्वस्थ्य पशु को रोगी पशुओं से अलग रखना चाहिये ।
- खाने–पीने का भी प्रबंध अलग होना चाहिये ।
- रोगी पशुओं की देख–भाल करनेवाले व्यक्ति को स्वस्थ्य पशुओं के पास नहीं जाना चाहिये।
- पशु के साफ–सफाई के दौरान अपने हाथों में दस्ताना पहनना चाहिये या बाद में हाथों को गर्म पानी से अच्छे तरीके से साबुन लगाकर धोना चाहिये ।

सर्रा

- यह रोग पशुओं के खून में एक प्रोटोजोआ परजीवी के उपस्थित होने के कारण होता हैं, जो प्रायः सभी प्रकार के पशुओं को प्रभावित करता हैं।
- **लक्षण –** सर्रा रोग अति तीव्र, अल्प तीव्र, तीव्र तथा दीर्घकालिक प्रकार का होता है। प्रभावित पशु में रुक–रुक कर बुखार का होना, सुस्ती, कमजोरी, खून की कमी, पशु द्वारा गोल चक्कर लगाना, सिर को दीवार या किसी कड़े वस्तु में टकराना, संक्रमित पशु के पिछले पैरों की पेशियों एंव तंत्रिका के कमजोर पड़ने के कारण पिछला धड़ का लकवाग्रस्त होना इत्यादि ।

- **उपचार** – पशुचिकित्सक की देखरेख में होनी चाहिए।
- **रोकथाम** –सर्रा रोग से बचाव के लिए पशु आवास के आस–पास गन्दा पानी, घास एवं कूड़ा–करकट को जमा नहीं होने दें। आवास को हवादार एवं साफ रखना चाहिए मध्यपोषी मक्खियों से बचाव के लिए आवास के आस–पास एवं अन्दर कीटनाशक औषधि का समयानुसार छिड़काव करते रहना चाहिए ।

थेलेरिओसिस

यह एक रक्त प्रोटोजोआ परजीवी जनित रोग हैं, जो अधिकांशतः संकर नस्ल के गायों में होती है।

- **प्रसार** – इस रोग का फैलाव गाय–भैंस में खून चूसने वाले किलनी (अढ़ैल) के द्वारा होता है।
- **लक्षण** – प्रभावित पशु में लगातार तीव्र बुखार का रहना, स्केपुला के बगल वाले लिम्फ नोड में सूजन, खून की कमी, कमजोरी, पशु द्वारा पूरी इच्छा के साथ खाना नही खाना, कभी–कभी खूनी दस्त होना इत्यादि।
- **उपचार** – पशुचिकित्सक के देखरेख में होनी चाहिए।

यकृत कृमि

- यह रोग एक प्रकार के चपटा कृमि के कारण होता है।
- **प्रसार** – इन रोग के फैलाव में जलीय घोंघा के द्वारा होता है ।
- **लक्षण** – प्रभावित पशु के भूख में कमी, पाचन क्रिया के बिगड़ जाने के कारण पहले कब्ज व फिर पतला दस्त, खून की कमी, जबड़े के नीचे सूजन ***(बोटल जाँ),*** दूध उत्पादन में कमी, पशु का धीरे–धीरे कमजोर हो जाना एवं पशु की मृत्यु हो जाना ।

पण कृमि/ऐम्फीस्टोमिओसिस

इसे *छेरा या गिल्लर पिट्ट रोग* भी कहते है।

- **प्रसार** – इन रोगों का फैलाव जलीय घोंघा प्रजाति के द्वारा होता है।
- **लक्षण** – तीव्र बदबूदार पिचकारी के जैसा दस्त, पशु के शरीर में पानी की कमी, जिसके कारण पशु द्वारा थोड़ी–थोड़ी देर पर पानी पीना, खून की कमी, जबड़े के नीचे सूजन, दूध उत्पादन में कमी एवं जल्द उपचार नही होने पर पशु की मृत्यु हो जाना।
- **उपचार** –पशुचिकित्सक की सलाह के अनुसार करनी चाहिए। जलीय घोंघे से संक्रमित स्थानों के आस–पास पशुओं को नही चराना तथा घोंघे से संक्रमित तालाबों का पानी नही पिलाना चाहिए।

गोल कृमि/एस्केरिएसिस

नवजात बछड़ों के पेट में पाये जाने वाले कृमि मुख्यतः एस्कैरिस है। यह नवजात बछड़ों की आंतों में पाये जाते है। गर्भवती मादा–भैंस व गाय के द्वारा भी यह रोग नवजात बछड़ों में पहुँच जाता है। रोग ग्रसित पशुओं में हल्के मटमैले अथवा दूधिया रंग के तेज पतले बदबूदार दस्त होते है। प्रभावित पशु में अत्यधिक शारीरिक कमजोरी हो जाती है। इस रोग से बछड़ों में मृत्यु भी हो जाती है। भैंस के बच्चों में यह रोग गाय के बच्चों की तुलना में अधिक होता है।

उपचारः–रोग का उपचार पशु–चिकित्सक की सलाह पर करना चाहिए।

बचावः—इसके बचाव हेतु बछड़ों के रहने का स्थान स्वच्छ व साफ—सूखा रहना चाहिए। रोगी पशु का उपचार तुरन्त करना आवश्यक है व उसे स्वस्थ पशुओं से अलग रखना चाहिए तथा प्रभावी पशु के मल को दूर गढ़ढ़े में दबा देना चाहिए। गाय की गर्भावस्था के तृतीय अवस्था में उचित कृमिनाशक दवा का प्रयोग करना चाहिए।

बछड़ों में सफेद दस्त/अतिसार

यह गाय/भैंस के छोटे बच्चों का घातक रोग है जिसमें बच्चे की मृत्यु भी हो सकती है।

लक्षण :— बुखार 103^0 से 105^0F , भूख की कमी होना। कुछ समय बाद मटमैला सफेद बदबूदार दस्त होना। कभी—कभी पेट में मरोड़ (पेट दर्द) होने पर बीमारी अधिक घातक हो जाती है तथा बच्चे की मृत्यु भी हो सकती है।

बचाव :— बच्चे को साफ सुथरे वातावरण में रखें, खीस/दूध पिलाते समय सफाई का विशेष ध्यान रखें तथा पर्याप्त मात्रा में खीस पिलायें। बीमारी होने पर नमक, चीनी एवं पानी का घोल थोड़ी—थोड़ी देर पर पिलाते रहें ताकि शरीर में पानी की कमी ना हो तथा यथाशीघ्र पशुचिकित्सक से सम्पर्क करें।

पशुओं में पायेजानेवाले बाह्य परजीवी

जूँ, मक्खी, किलनी या अढ़ैल, कुटकी, पिस्सू इत्यादि बाह्य परजीवी के रूप में पाये जाते हैं, जो पशुओं के शरीर पर या त्वचा के अन्दर पाये जाते है। ये मवेशी के खून चूसते हैं। साथ ही कई बीमारी के कीटाणुओं को एक मवेशी के शरीर से दूसरे मवेशी के शरीर में ले जाते हैं।

बाह्यपरजीवियों की रोकथाम

- पशुशाला तथा पशुओं को साफ—सुथरा एवं सूखा रखना चाहिए, जिससे परजीवियों की संक्रामक अवस्था पनप नही पाये।
- पशुओं को बाँधने का स्थान साफ—सुथरा, हवादार तथा पर्याप्त रोशनी वाला होना चाहिए, क्योकि गन्दगी से मच्छर, मक्खी, जूँ आदि पैदा होते हैं ।
- पशु आवास के आस—पास गन्दा पानी, घास एवं कूड़ा—करकट को जमा नहीं होने दें ।
- पशुशाला के फर्श एवं दीवारें पक्की होनी चाहिए तथा नियमित रूप से (महीने में दो बार) कीटनाशक घोल का दीवार एवं दरारों में छिड़काव करना चाहिए।
- महीने में एक बार सभी मवेशियों को कीटनाशक दवा के घोल (पशुचिकित्सक की सलाह के अनुसार) से पोंछना चाहिए।
- आवास के आस—पास और अन्दर एवं पशु के शरीर पर बाह्यपरजीविनाशक औषधि का समयानुसार पशुचिकित्सक के सलाह के अनुसार छिड़काव या उपयोग करते रहना चाहिए ।
- पशुओं को नहलाते समय बाह्यपरजीवियों को हाथ से अलग करके नष्ट कर देना चाहिए ।
- पशु के शरीर पर कोई भी घाव होने पर तुरन्त उसका उपचार करना चाहिए ।
- चारागाह की समय— समय पर जुताई कर खर पतवार मे आग लगा देनी चाहिए, इससे किलनी की अवयस्क अवस्था समाप्त हो जाती है।
- पशुओं को चरने के लिए सुबह धूप निकलने के बाद तथा ओस सूखने के बाद ही ले जाना चाहिए एवं सूर्य छिपने से पहले वापस ले आना चाहिए।
- चारागाह को बदलते रहना चाहिए।
- वर्ष में तीन बार उपयक्त कृमिनाशक का प्रयोग (जनवरी/फरवरी, जुलाई/अगस्त एवं अक्टूबर/नवम्बर) करना चाहिए। रोगग्रसित पशुओं के साथ—साथ रोगमुक्त पशु को भी कृमिनाशक दवा देना चाहिए।

दुग्ध ज्वर

यह दुधारू पशुओं विशेषकर गाय, भैंस में प्रसव के तुरन्त या दो–तीन दिन के बाद देखा जाता है। यह रोग दूसरे, तीसरे और चौथे ब्यान में अधिक होता है।

लक्षण – इस रोग में बच्चा देने के बाद पशु उत्तेजित सा प्रतीत होता है। उसकी आँखें डरावनी लगती है। दाँत किटकिटाता हैं, पशु शीघ्र खड़ा होता है और कुछ ही मिनटों में पुनः बैठ जाता है। पशु खाना पीना बंद कर देता है। दूसरी अवस्था में पशु सुस्त हो जाता है और अपना सिर मोड़कर पीछे की ओर रख लेता है या सिर को आगे खींचकर जमीन पर रखता है। पशु खाना पीना बंद कर देता है और मुँह शुष्क हो जाता है। खड़े होने पर असमर्थ रहता है। समय से इलाज नहीं होने पर पशु की मृत्यु तक हो जाती है।

उपचार – बच्चा देने के एक दो माह पूर्व गाभिन गाय/भैंस को पशुचिकित्सक की सलाह पर अतिरिक्त कैल्शियम देना चाहिए।

- बच्चा देने के बाद पूरा फेनुस नहीं दूहना चाहिए।
- दुग्ध ज्वर की स्थिति होने पर पशु चिकित्सक से सम्पर्क कर इलाज करायें।

थनैला रोग

यह रोग दुधारू पशुओं में होने वाला एक प्रमुख रोग है जिसमें पशु का अयन व थन सूज कर गर्म और कठोर हो जाता है। दूध का रंग बदल जाता है एवं कभी–कभी दूध में छटका/लरछा आने लगता है। इस बीमारी से उत्पादन क्षमता पर भी प्रभाव पड़ता है। कभी–कभी समय से इलाज न कराने पर दूध आना बंद हो जाता हैं। थनैला रोग के प्रमुख कारण कई तरह के कीटाणुओं का होना है। इसके अतिरिक्त साफ सफाई, गन्दें हाथों से दूध निकालना, पशु के थनों पर घाव होना, दूहने की विधि भी इसके लिये उत्तरदायी होता है। यह रोग अधिक दूध देने वाली पशुओं में अधिक होता है एवं विदेशी या संकर नस्ल के गायों में अधिक होने की संभावना रहती है भैंसों की अपेक्षा गायों में अधिक होती है।

उपचारः–

- रोगी पशु को स्वस्थ्य पशु से अलग रखें
- थनों से जब भी दूध निकालें, पूरा दूध निकालें।
- पहले स्वस्थ्य थनों से दूध निकालें, तत्पश्चात् रोग ग्रस्त थनों से दूध निकालें।
- पशु चिकित्सक की सलाह से उचित उपचार कराना चाहिए।

पशुओं में डेगनाला रोग (पुँछकटवा रोग)

लक्षण :– मुख्यतः यह बीमारी भैंस जाति के पशुओं में होती है। वैसे गोवंश के पशु भी इस संक्रमण के शिकार होते हैं। इस बीमारी का निश्चित कारण अभी तक ज्ञात नहीं है, परन्तु डेगनाला एक फफुंद जनित बीमारी है। इस बीमारी में पशुओं के कान, पूँछ एवं खुर सुखने लगते है और अंततः सड़ कर गिर जाते है। पशु भोजन करना बंद कर देता है एवं दिनों दिन कमजोर होते जाता है। कुछ वैज्ञानिकों का यह मत है कि यह बीमारी सुक्ष्म पोषक तत्वों की कमी की वजह से होती है। अधिक नमी युक्त पुआल या भूसा खिलाने से यह रोग आमतौर पर जानवरों में होता है।

आवश्यक सुझाव :–

1. पशुपालकों को यह सुझाव दिया जाता है कि पशुओं को फफुंदी लगा हुआ चारा– दाना एवं भूसा नहीं खिलायें।
2. पुआल को पानी से धोकर खिलायें।
3. पशुओं को स्वच्छ जगह पर रखें।
4. पशुओं को नियमित रूप से खनिज मिश्रण दें।
5. गोशालाओं में नियमित रूप से फिनाईल एवं चूने के पानी का छिड़काव करें।
6. शरीर के संक्रमित भाग को नीम के पत्ते को पानी में उबाल कर उसी पानी से घाव को साफ करें। तत्पश्चात् एन्टीसेप्टीक मलहम लगाये एवं अधिक समय तक क्रियाशील रहने वाले एन्टीबायोटिक का प्रयोग करें।

पशुओं में कृमिनाशक दवा का प्रयोग

क्र0सं0	परजीवी का प्रकार	बीमारी का नाम	दवा का नाम	खुराक/कि0ग्रा0 शरीर भार	मार्ग	टिप्पणी
1.	बछड़े के लिए गोल कृमि	एस्केरिएसिस	1. फेनबेन्डाजोल 2. अल्बेन्डाजोल 3. आइवरमेक्टीन	5–7.5 मि0ग्रा0/कि0ग्रा0 शरीर भार 1मि0ग्राम/5 कि0ग्रा0 शरीर भार	मुँह से	पहली खुराक जन्म के 10–15 दिन बाद देनी चाहिए। फिर 21 दिन पर दूसरा तत्पश्चात् 45 दिन के अंतराल पर दोहरायें।
2.	चपटा(फ्लूक) कृमि	फैस्सिलीएसिस, एमफीस्टोमिएसिस	1.आक्सीक्लोजानाइड 2. ट्राईक्लोबेन्डाजोल 3. अल्बेन्डाजोल 4. आइवरमेक्टीन	10 मि0ग्रा0/कि0ग्रा0 वजन 5–7.5 मि0ग्रा0/कि0ग्रा0 शरीर भार 5–7.5 मि0ग्रा0/कि0ग्रा0 शरीर भार 2सीसी/100 कि0ग्रा0	मुँह से गरदन पर एससी	जरूरत के हिसाब से कृमि मुक्त करें
		सिस्टोसोमिएसिस (नैजल ग्रेन्युलोमा)	1. लिथियम एंटीमोनी थियोमैलेट	15 मिली/350 कि0ग्रा0 वजन	माँसपेशी में 4–6 बार (सप्ताह में दो बार)	दवाओं का उपयोग जरूरत के अनुसार किया जा सकता है।
3.	फीता कृमि	फीता कृमि संक्रमण	1.ऑक्सीक्लोजानाइड 2. निक्लोसामाइड 3. प्राजीक्विंटल	10 मि0ग्रा0/कि0ग्रा0 वजन		15 दिन बाद दोहरायें।

नोट :– साधारणतः पशु को कृमिनाशक दवा हर तीन महीने अर्थात् साल में चार बार (बरसात के पूर्व एवं बरसात के पश्चात्) अवश्य देना चाहिए।

पशुओं को संक्रामक रोगों से बचाव हेतु टीकाकरण

क्रमांक	रोग का नाम	टीका लगाने का समय
1	गलाघोंटू	6–8 माह की उम्र में पहला टीका तथा उसके बाद वर्ष में एक बार बराबर अंतराल पर वर्षा ऋतु आरंभ होने से पहले।
2	कृष्णजंघा (ब्लैक क्वार्टर)	6 माह की उम्र में पहला टीका तथा उसके बाद वर्ष में एक बार बराबर अंतराल पर।
3	एन्थ्रैक्स	6–8 माह की उम्र में पहला टीका तथा उसके बाद वर्ष में एक बार, खास तौर पर वर्षा ऋतु प्रारंभ होने से पहले।
4	ब्रूसेलोसिस	मादा बाछियों को 6–9 माह की उम्र में देना चाहिए। नर में इस टीकाकरण की आवश्यकता नहीं है।
5	खुरहा–मुँहपका	1 माह से कम उम्र में पहला टीका देते हैं तथा दूसरा टीका उसके 21 दिन बाद पुनः 5–6 माह की उम्र में टीका देते हैं तत्पश्चात् हर 6 माह पर टीकाकरण करते है।